वर्ष १०, अंक ८

श्रीकृष्णाय नमः

मई

ज्येष्ठ १९९३

वार्षिक चन्दा २)

सम्पादक—

ब्र० कृष्णानन्द, दुर्गादत्त

एक प्रति ।)

विषय सूची

नं०	लेख	लेखक	पृष्ठ
१.	वेदोपदेश ...	... ...	२२१
२.	सन्तोष का पुरस्कार (कथा)	[ले० साहित्य का एक प्रेमी	२२२
३.	मोहन (कविता)	[ले० श्याम विरही	२२४
४.	योग साधन	[ले० स्वामी शिवानन्द सरस्वती	२२५
५.	तन्मया (कविता)	[ले० धनराजजी शास्त्री	२२७
६.	राम नाम के जप करने से क्या लाभ है	[ले० मुरलीधर वकील	२२८
७.	विनय मंजरी	[ले० गजराज जी	२३०
८.	काव्य	[ले० डा० नन्दकिशोरजी बी० ए०	२३५
९.	फिर (कविता)	[ले० मदन गोपाल सिंहल	२३७
१०.	मैस्मेरिज्म	[ले० यमुना प्रसाद श्री वास्तव	२३८
११.	उपदेशामृत	[ले० स्वामी भोले बाबाजी	२४०
१२.	चर्पट पंजरी कोष	[ले० सियाराम शर्मा	२४१
१३.	सत्संग सभा	[ले० रामेश्वर दत्त शर्मा	२४४
१४.	विचार सागर	[ले० श्रीयुत	२४५
१५.	मेरी भावना		

भक्ति के नियम

१. भगवान की भक्ति का प्रचार करना, गो रक्षा और उसके लिए गोचर भूमि छुड़वाना, जलाशय बनवाना, मनुष्य मात्र के लिए शिक्षा का प्रचार करना. वैदिक अनुभूत औषधियों का प्रचार करना, ग्रामों में परस्पर के झगड़े और वैमनस्य मिटा कर शान्ति व प्रेम बढ़ाना, सब संस्थाओं में भगवद्भक्ति और धर्म का भाव जाग्रत करना, राजा और प्रजा सब ही का हित चिन्तन करना।

२. यह पत्र प्रति अंग्रेज़ी मास की पहली तारीख़ को प्रकाशित हुआ करेगा।

३. अग्रिम वार्षिक चन्दा सर्व साधारण से २) होगा

४. जो महानुभाव २५) या इससे अधिक देंगे वह पत्र के संरक्षक और ५) देने वाले सहायक होंगे।

५. लेख सम्बन्धी पत्र व्यवहार सम्पादक भक्ति कोरी, तहसील रेवाड़ी के पते पर और प्रबन्ध सम्बन्धी पत्र व्यवहार मैनेजर 'भक्ति प्रेस' आश्रम रेवाड़ी के नाम से भेजना चाहिये।

६. लेख सम्बन्धी पत्र व्यवहार सम्पादक के नामसे और प्रबन्ध सम्बन्धी पत्र व्यवहार मैनेजर भक्ति के नाम से होना चाहिए

७. जिन ग्राहकों के पास जिस मास की "भक्ति" न पहुंचे, उनको स्थानीय पोस्ट आफिस से पूछ कर उस मास की अमावस्या से पूर्व कार्यालय में सूचना भेजनी चाहिये। स्थानीय पोस्ट आफिस में बिना पड़ताल किये अथवा अमावस्या के बाद सूचना आने पर "भक्ति" नहीं भेजी जायगी।

८. विज्ञापन छपाई प्रति मास साधारण पृष्ठ ३॥) कवर का चौथा पेज ५)

भक्ति के संरक्षक और सहायक

राव श्रीराम जी रईस नांगल	१२५)
भक्त नन्दकिशोर जी चर्खी दादरी	१२१)
ला० गोपालदास जी रईस लाहौर	१११)
धर्म सिंह मावजी जेठवा कोलरीप्रोप्राइटर झरिया	१२०)
आनरेबिल डा० गोकलचन्द जी नारंग वज़ीर लोकल सेल्फ गवर्नमेन्ट लाहौर	१०१)
बाई बदामो देवी पुत्री लाला गनेशीलाल चर्खीदादरी	१०१)
श्रीमती रानी निहालकोर धर्मपत्नी कप्तान राव बहादुर बलबीरसिंह जी	१०१)
राव बहादुर, कप्तान राव बलबीर सिंह जी ओ० बी० ई० रामपुरा	५१)
चौधरी शिवसहाय जी कोसली	५१)
लाला श्यामलाल जी कपूर दिल्ली	५१)
महाशय शोभाराम जी डूंगरवास	३१)
डाक्टर झवेरभाई नारायणभाई देसाई महुधा जिला कैरा	२५)
पण्डित पन्नालाल जी तोपखाना नं० ५ अम्बाला	२५)
चौधरी उमराव सिंह पहाड़ी धीरज दिल्ली	१५)
पण्डित जयराम जी 'सनातन' देहली	८)
सूबेदार मेजर दीपचन्द जी	५)
मंगलसिंह नम्बर नं० ५ तोपखाना अम्बाला	५)

आश्रम के उद्देश

१. श्री भगवान् की भक्ति का प्रचार करना।
२. गोरक्षा और उसके लिये गोचर भूमि छुड़वाना।
३. जंगलों में वृक्ष लगवाना और उसके बीच में जलाशय बनवाना।
४. शिक्षा का प्रचार करना जिसमें मनुष्य मात्र विद्यालाभ कर सकें और प्राचीन प्रथा को फिर प्रचलित करना।
५. बीमारियों के अवसर पर दवाई बांटना।
६. आस पास के ग्रामों में परस्पर के झगड़े और वैमनस्य मिटा कर शान्ति और प्रेम बढ़ाना।
७. सब संस्थाओं में भगवद्भक्ति और धर्म का भाव जाग्रत करना।
८. राजा और प्रजा सब ही का हित चिन्तन करना।

मनुष्य मात्र के लिये साधारण नियम।

१–मनुष्य का पहला कर्तव्य है कि सद्गुरु की शरण में जावे और उनकी कृपा सम्पादन करने के लिये शुद्ध चित्त से उनकी सेवा करे।
२–उन सद्गुरु के वचनों पर दृढ़ विश्वास रक्खे।
३–एक ही मत मार्ग का अनुसरण करे।
४–साधु सज्जन का सत्संग करे।
५–विषयों के आधीन न हो।
६–शत्रुओं को मित्र बनावे।
७–अधिक उपाधि न बढ़ावे।
८–निरन्तर सारासार का विचार करता रहे।
९–भूतमात्र पर दया रक्खे।
१०–अहर्निश परमात्मा का ध्यान करके उन पर दृढ़ आस्था रक्खे।

भक्ति प्रेस में मिलने वाली पुस्तकें।

१	भगवद्गीता संस्कृत तथा भाषा टीका सहिता	मूल्य	॥=)
२	भगवद्गीता दशम अध्याय पर्यन्त ...	,,	।=)
३	गीता मूल (मोटा टाइप)	मूल्य नित्य पाठ	
४	वेदोपनिषद्		।=)
५	अष्टोत्तरशतमन्त्र माला	,,	=)।
६	ज्ञानधर्मोपदेश	,,	=)॥
७	भक्ति ज्ञान योग संग्रह	,,	=)॥
८	सत्य शब्द संग्रह (गुटका)	,,	=)
९	सत्य शब्द संग्रह	,,	॥=)
१०	शब्द सदाचार संग्रह	,,	=)॥
११	शब्द सार संग्रह	,,	=)।
१२	शब्दसंग्रह	,,	=)॥
१३	सारसंग्रह	,,	।)
१४	भाषा फक्किका प्रकाश	,,	।=)
१५	मनुस्मृति सार	,,	॥)
१६	भक्ति चिन्तामणि	,,	।=)
१७	भगवद्भक्तांक	,,	॥=)
१८	भगवदंक	,,	॥)
१९	गवांक	,,	१)
२०	महात्मांक	,,	१)

नोटः-एक रुपये से कम मूल्य की पुस्तक मंगाने वालों को डाक महसूल सहित टिकट भेजने चाहियें।

मिलने का पताः-

श्री भगवद्भक्ति आश्रम, रेवाड़ी।

जनता में भगवद्भक्ति भाव को जाग्रत करने वाली सचित्र मासिक पत्रिका।

वर्ष १० | श्रीभगवद्भक्ति आश्रम रेवाड़ी, ज्येष्ठ ता० १ मई १९३६ | अंक ८ पूर्ण संख्या ११६

वेदोपदेश

यो ब्रह्माणं विदधाति पूर्वं यो वै वेदांश्च प्रहिणोति तस्मै।
तं ह देवमात्म बुद्धि प्रकाशं मुमुक्षुर्वै शरण महं प्रपद्ये॥

भावार्थ—जो सबसे पहिले ब्रह्मा की रचना करते, उनके लिये स्वयं वेदों को हैं उच्चरते।
स्वयं प्रकाशित वही, देव! हे परम दयालो!! मैं मुमुक्षु हो शरण पड़ा हूं मुझे संभालो॥

संतोष का पुरस्कार

प्रेषक–"कथा साहित्य का एक प्रेमी"

गतांक से आगे

पतिव्रता ने आंसू पूंछ कर और हृदय पर पत्थर रख कर नीचे उतर गई। सेठ जी ने पुत्र को पुनः लपेट कर ज्यों का त्यों रख दिया। उनके नेत्रों में आंसू न थे। पण्डित जी के ऊपर क्रोध भी न था। ऐसी ही हरि इच्छा थी। भाग्य में पुत्र सुख नहीं है। क्या किया जाय। नीचे आकर देखा कि पंगत बैठ रही है। सेठ जी ने सब को सादर बिठलाया। पंडित भी आ गये। झपट कर ऊपर गये शव ज्यों का त्यों देख कर सन्तोष के साथ नीचे उतर आये। सेठानी जी भोज्य पदार्थों को बाहर पहुंचा रही थीं। मानों, कुछ नहीं हुआ। मानों, पृथ्वी उसी तरह घूमती है और सूर्य उसी तरह से तपते हैं।

पहली पंगत समाप्त हुई, दूसरी बैठी। तीसरी पंगत कंगालों की थी। उनको भी खूब खिलाया पिलाया गया, ब्राह्मणों को दक्षिणा दी गई। सबको विदा करके सेठ जी ऊपर गये। पण्डितजी कुछ विचार कर रहे थे। तब तक सेठजी ने जेब से निकाल कर एक हज़ार रुपये के नोट उनके सामने रख दिये। पंडित–यह क्या? सेठ–आपकी विदाई ५००)रुपये कथा पर चढ़े थे और ५००) रु० मैं देता हूं। श्यामसुन्दर का सारा गहना भी लेते जाइये कि जिस के ऊपर आपने नियत बिगाड़ी। इस समय १० बजे हैं। १२ बजे की गाड़ी से घर चले जाइये। उठिये। पंडितजी की बोली बन्द हो गई। कुछ न कह सके। कहते भी क्या? चुपचाप उठे। सामान बांधा। सेठजी ने चरण छुए। आशीर्वाद भी न दे सके। द्वार पर आये। एक नौकर इक्के पर उनको बिठला कर स्टेशन ले गया।

(४)

आज हज़ारों व्यक्तियों ने भोजन किया परंतु सेठ और सेठानी के लिये भोजन न था। भोजन तो था, परन्तु खाने के लिये ईश्वरीय हुक्म न था सेठानी जी अन्दर की एक कोठरी में पृथ्वी पर पड़ी थीं। सेठजी छत के एक कमरे में पड़े थे। बाहर दरबान के लिये यह हुक्म था, कि कोई भी अन्दर न आवे। रात भर जागने के कारण मालिक और मालिकिन सो रहे हैं, यही दरबान का निश्चय था। पुत्र वियोग पर क्या लिखूं। भगवान रामचन्द्र जी केवल चौदह वर्ष के लिये प्रवास में गये थे उसी में

पिता ने प्राण छोड़ दिये। श्रीकृष्ण जी केवल अपने घर गये थे, उसी समय संरक्षक नंदजी ने गोकुल उजाड़ दिया? हायरे वात्सल्य! पुत्रके लिये पशु और पक्षी तक मर मिटते हैं। सेठ और सेठानी के लिये क्या कहा जाय? उनका श्यामसुन्दर तो सदा के लिये चला गया था। वह ऐसे स्थान पर प्रस्थान कर गया था कि जहां से कोई आज तक लौटा नहीं-जहां से किसी ने कोई संदेश भी न दिया। रात्री के आठ बज गये। दोनों में से कोई भी न उठा। कोई एक दूसरे से बोले भी नहीं। सेठ जी की इच्छा होती थी कि पुत्र को फर्श से निकालकर छाती से लगा लें? परन्तु वह क्या पुत्र था? पुत्र क्या रंग में भंग किया करते हैं? तब तक दरबान ऊपर आया और हाथ जोड़ कर बोला—"द्वार पर दो सन्यासी खड़े हैं।" सेठ जी नीचे गये। एक श्यामली मूर्ति थी और दूसरी गोरी। राम लक्ष्मण की सी जोड़ी थी। चित्रकूट से आरहे थे। सेठजी ने भक्ति से दोनों के चरण स्पर्श किये। आगे के सन्यासी ने आशीर्वाद दिया—"अमंगल दूर हो।" सेठजी दोनों को ऊपर ले गये। जिस छत पर फर्श था, उससे हट कर दूसरी छत पर बिछाया और संन्यासियों को बिठलाया तदनन्तर हाथ जोड़ कर कहा—"मेरे धन्य भाग्य जो सहसा दर्शन हुए। क्या कुछ भोजन करके कृतार्थ करेंगे?"

श्याम संन्यासी बोले—"बड़ी भूख है शीघ्र लाओ। माई परोसेगी तो भोग लगेगा। जाओ माई को लाओ, भोजन लाओ और पांच पत्तलें लगाओ।" सेठजी गये। सेठानी की हालत देखी तो दहल गये। संन्यासियों का आगमन हाल सुनाया तो कुछ शान्त हुई। पति की आज्ञा और संन्यासियों की इच्छा जान कर सेठानी चल दीं। सब सामान और पत्तलें लेकर दोनों ऊपर जा पहुंचे।

श्याम सन्यासी बोले—"तुम दोनों अभी तक भूखे हो। तुम लोग भोजन न करोगे तो हम लोग कैसे खा सकते हैं? अच्छा दो पत्तलें हम लोगों को डालो। दो अपने और माई के लिये डालो। पांचवी यहां मेरे निकट डाल दो। इस पत्तल पर भी सामान परोस दो। खाने वाला भी आ जायगा।

स्कूल के विद्यार्थी और क्लर्क लोग हर समय ही बहस किया करते हैं। कौन कैसा है इसकी तमीज़ तो होती नहीं। उनके लिये तो सब धान बाईस पंसेरी होती है ऐसे बेवकूफों को दर्शन देने भी कौन आता है? जो जैसा है उसे वैसा ही अनुभव दिया जाता है। राम जी की—पार्लमेंट बिलकुल है। भक्ति मार्ग ही दूसरा है। सेठजी ने नीरव-होकर आज्ञा पालन की। जब सब लोग पत्तलों पर बैठ गये तब वही संन्यासी बोले- "अपने लड़के को लाओ।" लड़के का स्मरण कर सेठानी जी रोने लगीं। सेठ जी ने उत्तर दिया-सो रहा है। संन्यासी ने कहा-जगा लाओ। सेठ-वह आवेगा तो आपको भी न खाने देगा। संन्यासी जाओ और लाओ।

सेठजी गये और लड़के को फर्श में से निकाल लाये। लड़के को २४ घन्टे हो गये मगर मुख की कान्ति नहीं-बिगड़ी थी। मानो हंसता हुआ सो रहा है।

श्याम संन्यासी ने हाथ बढ़ा कर लड़के को गोद में ले लिया। अपनी चद्दर उसके ऊपर डाल दी। एक हाथ में दही उठा लिया। न मालूम क्या उसके कान में क्या कहा। दही मुंह में डाला तो आप

खाने लगा। उठा कर बैठाला तो नेत्र खोल दिये। माता ने छाती से लगा लिया। संन्यासी ने कहा—"माता, इसको नीचे जाकर सुला आओ अभी नहीं खावेगा। जो खाना था खा लिया।" माता नीचे गई। इस घटना के पूर्व उसे दुःख के कारण भूख न थी, अब सुख के कारण भूख नहीं देर होते देख कर सेठजी को बुलाने भेजा। सेठ और सेठानी ऊपर आये। देखा कोई कहीं नहीं। पत्तलें रक्खी थीं, सामान पड़ा था परन्तु संन्यासी लोग न थे। सेठजी ने संसारी-अदालत से न्याय नहीं चाहा था, रामजी की अदालत ने काम कर दिया। अंग्रेजी राज्य होने से राम राज्य के तमाशे नहीं लग सकते। जो कुछ जानते होंगे वह इस घटना पर विश्वास करेंगे।*

मोहन

[ले० श्री श्याम विरही जी]

झांकी ज़रा दिखा जा मोहन।
यही निहारती हूं अब; पनघट, नाथ आप का चिर परिचित तट।
शून्य वीथियां अब ब्रज की हट, यही आज तरणी तनुजा तट॥
कहां छिपे अब हे मन मोहन।
वे निकुञ्ज के लतिका रज कण, तरु रसालनीप तक प्रति क्षण।
खोजूं आह विह्वल हृदय धन, मिले न तू कत प्यारे मोहन॥
झांकी ज़रा दिखा जा मोहन।
पुतली मौन प्रेम के मारे; वाणी मूक आवे अब आये।
प्रियतम बस यह आश लगाये, आ अब प्यार जता जा मोहन॥
झांकी ज़रा दिखा जा मोहन।

---

*नोट—यह कहानी पं० रामनारायणजी उपाध्याय स्टेशनमास्टर पंवार खेड़ा जी० आई० पी० की परलोकवासिनी धर्मपत्नी श्रीमती श्यामलता बाई उपाध्याय के निजी कागजों में पाई गई और उन्हीं की लिखी हुई प्रतीत होती है। आप बड़ी ही भक्ति परायण और आदर्श महिला थीं। आपके लिखे हुये कई भजन तथा पद्यात्मक निबन्ध आपके पतिदेव के पास सुरक्षित हैं।

—कहानी प्रेषक।

योग साधन

[ले०—श्रीस्वामी शिवानन्दजी सरस्वती]

जो जिज्ञासु योग का साधन करना चाहते हैं उनके लिए प्रकृति के गुप्त रहस्यों का अध्ययन बहुत लाभ दायक हो सकता है। चित्त निरोध में इससे बहुत सहायता मिल सकती है। जिस प्रकार अग्नि से गर्मी पृथक् नहीं है उसी प्रकार प्रकृति परमात्मा से पृथक् नहीं है। प्रकृति के नियम और परमात्मा एक ही पदार्थ है। प्रकृति के नियम परमात्मा के नियम हैं।

जिस प्रकार सूर्य किरणों के बिना नहीं रह सकता उसी प्रकार परमात्मा प्रकृति के बिना नहीं रह सकता। जिस प्रकार सूर्य अस्त होते समय अपनी किरणों का अपने में समावेश कर लेता है उसी प्रकार परमात्मा महाप्रलय में प्रकृति को अपने में लीन कर लेता है।

संसारी काम करते हुए यह अनुभव करो कि परमात्मा अप्रत्यक्ष रूप से हमारी सहायता कर रहा है। परमात्मा सदैव तुम्हारे साथ है। वह हमारे कर्मों और विचारों का साक्षी है। बच्चे छतों पर से गिरजाते हैं और बड़े आश्चर्य की बात है कि उनके चोट नहीं लगती। मोटर कार आदि अनेक घटनाओं में मनुष्य अज्ञात दैवी शक्ति की सहायता से विचित्र रूप से बच जाते हैं। आप सब लोगों को इस प्रकार के अनुभव अपने जीवन में हुए होंगे, जब तुम बहुत कठिनाई में होते हो तो वह तुमको ऐसी जगह से सहायता देता है जिस का तुमको कोई खयाल भी नहीं होता है, तुमको ऐसा मालूम होता है कि यह सहायता अज्ञात रूप से परमात्मा ही ने की है। परन्तु जब तुम्हारी जेब भर जाती है तो तुम उसे भूल जाते हो।

इस संसार में दो कर्म्म-शक्तियां हैं एक भलाई दूसरी बुराई। भलाई और बुराई का जोड़ा है यह एक ही पिता से उत्पन्न हुई हैं। यह द्वन्द्व हैं और एक दूसरे से विरोधी शक्तियां हैं। यह स्वतंत्र सत्ता नहीं हैं। बुराई का अस्तित्व भलाई की शोभा के लिए है। बुराई निषेधार्थक भलाई है। बुराई भलाई की जननी है। बुराई खण्डनात्मक शक्ति है। भलाई व्यवस्थात्मक शक्ति है। इस संसार में न तो पूर्ण भलाई की सत्ता है और पूर्ण बुराई की। बुराई की भलाई से पृथक् कोई सत्ता नहीं है। जहां बुराई है वहां भलाई है और जहां भलाई है वहां बुराई है। इस द्वन्द्व संसार में तुम केवल भलाई की आशा नहीं कर सकते। केवल भलाई तो ब्रह्म में ही हो सकती है। वास्तविक सत्य के आधार पर देखा जावे तो जो कि बुराई और भलाई के पीछे स्थित है बुराई और भलाई का कोई अस्तित्व नहीं है। भलाई और बुराई

मानसिक वृत्तियां हैं। बुराई और भलाई को उल्लंघन करके अनन्त आनंद और शान्ति में प्रवेश करो उस ज्ञानी के लिए जिस को अपनी आत्मा का ज्ञान है भलाई और बुराई कुछ भी नहीं है। आत्मा का ज्ञान होने पर ही तुम बुराई के तरीकों को समझ सकोगे। अब अपने दिमाग़ को खराब मत करो। यह तो अवस्था भेद है। इसका ज्ञान केवल ब्रह्म को है। जो देश, काल और कारण में बद्ध बुद्धि है वह बुराई की पहेली के हल करने की शक्ति नहीं रखती। जब तुम अपने स्वरूप में पूर्ण रूप से प्रतिष्ठित हो जाओगे तो तुमको भलाई, बुराई का ज्ञान हो जावेगा और वह ज्ञान यह होगा कि संसार में न कुछ भलाई है न कुछ बुराई। गाड़ी को घोड़े के सामने मत रक्खो। अपने मानसिक भाव का परिवर्तन करके बुराई को भलाई में बदल डालो। बहुधा बुराई में से ही भलाई उत्पन्न होती है। नवजीवन, और पुनर्निर्माण के लिए संहार का होना आवश्यक है। क्या वह बीमार जिसके पेट में सख्त वायु गोला का दर्द है डाक्टर से दवाई लेते समय यह प्रश्न करेगा कि इस दवाई में कौन २ औषधी पड़ी है? क्या वह अति शीघ्र दवाई खाने का प्रयत्न नहीं करेगा? जिस मनुष्य के कपड़ों में आग लगी हुई हो क्या वह आग बुझाने का खयाल छोड़कर यह प्रश्न करेगा कि अग्नि किस तरह लगी थी? वह तो सीधा पानी की तरफ दौड़ कर जावेगा।

तमोगुण बुराई है, सत्वगुण भलाई है तमोगुण को सत्वगुण में बदल डालो फिर बुराई भलाई में बदल जावेगी। स्वार्थ बुराई है। स्वार्थ रहित होना भलाई है। काम बुराई है। ब्रह्मचर्य भलाई है। लालच बुराई है, उदारता, बुद्धिमानी और तटस्थ भाव भलाई हैं। अहंकार बुराई है नम्रता भलाई है।

बहुधा बुराई से भलाई उत्पन्न होती है। यदि फसल के पकने के अवसर पर भारी वर्षा होती है तो लोग उसे बड़ी बुराई समझते हैं परन्तु यह तो परमात्मा ही जानता है कि मेरी सन्तान की भलाई किसमें है? वह यह नहीं जानते कि परमात्मा यह वर्षा इस लिए कर रहा है कि फसल में जो बीमारियों के कीड़े लगे हुए हैं वह धुल जावें। यदि ऐसा न करे तो बड़ी भारी बीमारी फैल कर हजारों मनुष्य मृत्यु के घाट उतर जावें। यह विचार करना चाहिए कि परमात्मा दयालु है। दैवी शक्तियों को खोज करने का प्रयत्न मत करो इससे तुम्हारी तुच्छ बुद्धि भ्रम में पड़ जावेगी।

युद्ध के सम्बन्ध में आप लोगों का क्या विचार है? इसमें सन्देह नहीं कि युद्ध एक प्रकार की बुराई है। परन्तु युद्ध से भी बहुधा अच्छे फल प्राप्त होते हैं। युद्ध परमात्मा की मरज़ी के बिना नहीं हो सकता। परमात्मा ही वज़ीर, बादशाह, डिक्टेटर, सेनापति और अध्यक्ष के चित्त में प्रेरणा करता है। युद्ध के कारण ही वीर योद्धा, निर्भय सिपाही, और उत्साही अद्वितिय राजनीतिज्ञ बनते हैं। युद्ध से मनुष्य निर्भय बन जाते हैं। अध्यात्म मार्ग के जिज्ञासु के लिए निर्भयता परमावश्यक गुण है। काम वासना की वृद्धि के कारण जन संख्या की वृद्धि हो रही है। मनुष्यों की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए पर्याप्त सामग्री नहीं है युद्ध के कारण फालतु जनसंख्या की वृद्धि रुक जाती है और लोग मरने से बच जाते हैं। युद्ध के कारण अभिमानी राजाओं का

अभिमान खण्डन हो जाता है। युद्ध से कंजूस धनी मनुष्यों के चित्त में दया, उदारता और सार्वभौम प्रेम का आविर्भाव होता है और वह अनाथों, विधवाओं और जख्मी लोगों की सहायता करने पर बाधित होते हैं। संसार और समाज बुराई में से ही उत्पन्न होता है।

जगत् का चित्त ही परमात्मा का चित्त है। व्यक्तिगत आत्माओं का मन ही समस्त जगत् का चित्त है। मनुष्य का चित्त परमात्मा के चित्त का अंशमात्र है। राजयोगी का चित्त जगत् के चित्तसे एकाकार हो जाता है। इस लिए वह सब के चित्तों का हाल जान जाता है। योगी समष्टि चित्त के साथ सर्वज्ञ बन जाता है।

नाम रूपात्मक जगत के अन्तर्गत जो शक्ति छिपी हुई है वह परमात्मा है। यह वीर्यवान शक्ति ही हमारे नित्य के जीवन पर शासन करती है। यह बलवान शक्ति ही मन और समस्त मनुष्य रूपी मशीन के भीतर काम करती है।

तन्मया

[ले०—श्री युत प्रज्ञाचक्षु पं० धनराजजी शास्त्री]

आपनी ओर की चाहे लिखी,
लिखी जाती कथा उत मोहन चोर की।
प्यारी दया करि वेगि मिलो,
सहजाति व्यथा नाहीं मैन मरोर की।
आपुहि बांधि लगावत अंक,
चाहो किद आली चिठी चित चोर की।
राधिका राधे रही भकि चौरि ली,
होय गई मूरति नन्द किशोर की॥

राम नाम के जप करने से क्या लाभ है ?

[ले०-मुरलीधर बी० ए०, एल० एल० बी० वकील]

उपरोक्त प्रश्न अनेकानेक तार्किक मनुष्यों ने मुझ से पूछा है। वे लोग यह कहते हैं कि यदि मैं किसी कानून को भंग कर दूं और उस कानून के बनाने वाले का केवल नाम जपा करूं तो कानून के भंग करने का अपराधी मैं अवश्य बनूंगा और मुझे यथोचित दण्ड भी मिलेगा वदापि कानून बनाने वाले का केवल नाम रटने से छुटकारा नहीं पा सकता। फिर यह कब सम्भव है कि कोई मनुष्य ईश्वरीय नियमों को भंग कर दे अर्थात् अहर्निश शम दमादि को तिलाञ्जली देकर दम्भ पाखण्ड तथा प्रमाद से परिपूर्ण होकर हर प्रकार के कुकर्मों में आसक्त रहा करे और केवल राम राम अथवा कृष्ण, कृष्ण, का रटन लगा कर इस अगाध भवसागर को पार कर जाय। तर्क से बात तो कुछ यथार्थ ज्ञान पड़ती है। परन्तु जब मैं अपने उन तार्किक मित्रों से कहता हूं कि कुछ और इस विषय पर विचार कीजिये तथा स्वयं अनुभव से इस प्रश्न का उत्तर लीजिये क्योंकि मैं तर्क द्वारा इस विषय का समाधान नहीं कर सकता और न मेरे विचार से कोई भी मनुष्य इस तर्क का उत्तर तर्क से देने में समर्थ हो सकता है कारण यह है कि किसी व्यक्ति के दृढ़ विश्वास को तर्क द्वारा उन्मूल करना अत्यन्त दुःसाध्य है।

अस्तु ! अब विचार करना है कि राम नाम को निरन्तर जप करने से मनुष्य को क्या लाभ हो सकता है और जिन मनुष्यों को इसमें सन्देह है उन से मेरी प्रार्थना है कि वे केवल परीक्षार्थ ही श्री राम नाम का जप करके अनुभव प्राप्त करें और स्वयं अपने संदेह को विनाश करें। जप करने में कुछ कष्ट तो अवश्य होगा परन्तु किसी विषयके अन्वेषण में कुछ समय बिना नष्ट किये तथा बिना कष्ट उठाये भी पूरा पता नहीं चलता।

अब रह गई मेरे स्वयं अनुभव की बात सो मैं भक्ति के पाठकों के समक्ष विचारार्थ प्रकट करता हूं। मैं कोई विशेष रूप में भजनीक नहीं हूं और न निरन्तर भगवन्नाम को जपते २ प्रेमोन्मत्त ही होता हूं। इसके कारण अनेक हैं जिनका वर्णन करके पाठकों का समय नष्ट नहीं करना चाहता। प्राणी मात्र के अन्दर तीन शरीर विद्यमान हैं अर्थात् (१) स्थूल (२) कारण और (३) सूक्ष्म। इन तीनों शरीरों में सूक्ष्म स्वयं स्वच्छ तथा निर्मल है। उसको धोने की अथवा किसी प्रकार स्वच्छ करने की चेष्टा करने की आवश्यकता नहीं है। हमारे तत्त्व दर्शियों के कथनानुसार वह स्वयं ईश्वर का तेजोमय अंश है और कारण शरीर को अपने प्रकाश में भला अथवा बुरा कर्म करने में राह दिखलाता है। अब रह गये स्थूल और कारण शरीर और इन्हीं दोनों शरीरों द्वारा भले अथवा बुरे कर्म हुआ करते हैं और इन्हीं दोनों शरीरों को अपने कृतकर्म के शुभाशुभ फल भोगने पड़ते हैं। अतएव मनुष्य का कर्तव्य है कि इन्हीं दोनों शरीरों को मल रहित बना कर स्वच्छ बना दें जिस से इन दोनों शरीरों से कुकर्म न हों और

न इन को अशुभ फल ही भोगने पड़ें । इन दो शरीरों की शुद्धि अथवा स्वच्छता किस प्रकार हो सकती है ? स्थूल शरीर जो पंचतत्त्व से निर्माण किया गया है यह तो जल मृत्तिका तथा चन्दनादि सुगन्धित द्रव्यों द्वारा शुद्ध तथा स्वच्छ किया जा सकता है। जहां तक मेरा अनुमान है कि इन दो शरीरों के विषय में जो कुछ मैंने अपना विचार प्रकट किया है उसमें किसी व्यक्ति से मेरा मतभेद होने की सम्भावना नहीं है। परन्तु कारण शरीर के स्वच्छ करने की विधि में कुछ भेद होता है। यदि कुछ देर गम्भीर विचार किया जाय तो मालूम हो जायगा कि यह मतभेद केवल क्षण मात्र के लिए ही है चिरस्थाई कदापि नहीं। कितने लोगों का विचार है कि कारण शरीर ज्ञान द्वारा शुद्ध किया जासकता है और कितनों का मत है कि एकाग्र चित्त होकर केवल भगवन्नाम के जप द्वाराही स्वच्छ हो सकता है। आधुनिक संस्था वाले तो भगवन्नाम के पक्षपातियों की धज्जियां उड़ाते हैं तथा उन लोगों के विचारों को केवल पोपलीला की संज्ञा से विभूषित करते हैं किन्तु सोचने की बात है कि ज्ञान से तो हो सकता है परन्तु ज्ञानोपार्जन का एक मात्र साधन क्या है अर्थात् मनुष्यों को तत्त्वज्ञान कैसे हो सकता है। क्या केवल शास्त्राध्ययन से ? मेरे विचार में तो केवल शास्त्राध्ययन से नहीं। वह तो साधन का एक तुच्छ अंग मात्र है क्योंकि शास्त्रों में तत्त्वदर्शियों तथा शास्त्रकारों के अनुभव वर्णन किये गये हैं जो किसी व्यक्ति के स्वयं अनुभव को पुष्ट कर सकता है। तो फिर कौन सा साधन है ? मेरे तुच्छ विचारों में वह साधन केवल भगवत् प्रेम है कि जो भगवन्नाम के निरन्तर जप तथा परमात्मा के गुणों के गान से ही मनुष्य के हृदय में उत्पन्न हो सकता है। फिर मतभेद कहां रह गया ?

जैसे कोई कहे रोटी से पेट भरता है और दूसरा कहे अन्न से पेट भरता है इसमें मत भेद की बात नहीं है और न एक दूसरे को अनेकानेक संज्ञाओं से विभूषित करने की शोभा है क्योंकि अन्न नहीं हो तो रोटी कहां से होगी केवल कारण और कार्य का अन्तर है बात कुछ नहीं। अस्तु सिद्ध है कि बाहर की शुद्धि जल मृत्तिका तथा सुगन्धित द्रव्यादिकों से और भीतर की स्वच्छता भगवन्नाम के निरन्तर प्रेमपूर्वक जप अथवा उच्चारण से जिससे अन्तरस्थ सब प्रकार के विकार शून्य हो कर भीतर अत्यन्त प्रकाशमय हो जाता है। श्री गोस्वामी तुलसीदास जी का कथन है।

'राम नाम मणि दीप धरु जीह देहरी द्वार'
तुलसी भीतर बाहिरो जो चाहसि उजियार'

जब पूर्ण रूप से मनुष्य के हृदय [illegible] हो जायगा तो समस्त अच्छे तथा बुरे [illegible] रूप से दृष्टि गोचर होने लगेंगे और मनु[illegible] पूर्ण तथा अपने कर्त्तव्य तथा अकर्त्तव्य का [illegible] हो जायगा। तब मनुष्य एक भी ईश्वरीय नियम (कानून) का उल्लंघन कदापि न कर सकेगा। बस स्वयं सिद्ध हुआ कि भगवन्नाम के निरन्तर प्रेम पूर्वक जप करने ही से प्राणी निष्कण्टक पथ पर चलेगा और कर्त्तव्याकर्त्तव्य का विचार करते हुये परम गति को प्राप्त हो जायगा। अतएव भगवन्नाम ही श्रेष्ठ है और मोक्ष का यही एक मात्र साधन हो सकता है

विनय मंजरी

[ले०—स्व० श्री गजराजजी श्री वास्तव]

(गतांक से आगे)

जिनको सब सेवत देव मुनि,
पुनि राखत वाम हिये जिनको।
पुनि सूर्य तपे जिनके बल से,
बल काँपत नाम सुने जिनको॥
मुनि नारि निषाद अजामिल व्याध,
तरे भजते भजते जिनको।
भौ सागर से तरना जो चहो,
भजलो मन में छिनको जिनको॥
सुन रे मन मूढ़ विचार कछू,
नहिं सोचहु गे पुनि औसर बीते।
वपु दुर्लभ पाइ भजौ रघुनाथ,
छाया लहिं कर्म गिरा अरु हीतें॥
दस माथ सहस्र भुजा सम भूप,
बचे नहिं काल के कौल बलीते।
गजराज नहीं कछु या भव में,
करु राम सों नेह विचार के रीते॥

मोतीदाम छंद

न जाकु समान विलोक गर्वार,
हित कहु कौन है तोर विचार।
मरे लग खात ये आपन होई,
अंचोई विराने भये तुर तोई॥
पिता सुत नारि है सम्पति केर,
विपत्ति परे नहिं आवहिं बेर।
विना रघुवीर हित नहिं कोई,
भजो मन मूढ़ महा सुख होई॥

दोहा

'सी' सीतल मन होत है,
'ता' तारे भव पार।
'रा' राखे पद तीर हरि,
'म' मम भव करि छार॥
सिय पति रघुवर दुख हरण,
शरण पाय सुख खान।
भज मन नित रघुकुल तिलक,
दीन बपु भगवान॥

सोरठा

कर विचार प्रभु रीति,
क्यों कूकर सम भूपत नित।
राम चरण रखु प्रीति,
अरे मूढ़ अज्ञान मन ॥

घनाक्षरी

दार अति प्यारी पितु बंधु महतारी,
नहिं होत संग वारी सब सुख के सगाई रे।
कूद कूद खावैं पै न आवैं एको काम,
सुख सम्पत्ति नशावैं पाप मोटरा बोहाई रे॥
वारी यम क्यारी जब आवैं अति भारी,
चहुं ओर ठाढ़े सारी नहिं कोई जो बचाई रे।
राम सुख खान जेहि ध्यावत जहान,
गजराज एक सोइ तहं विपति सहाई रे॥
काम सों स्वरूप दिन भूप सों प्रताप खूब,
सोम सो सुशील भयो मान गण ईश सों।
भारी अति ब्रह्म सांचे हरिचन्द सों,
जु इन्द्र महीप बलवान दससीश सों॥
शुक सो मुनींद्र सम चिरजीवन लोमश सम,
गिरा सो बोलैया उपकारी हनुकीश सों।
भनि गजराज ऐसे भयेहूं कहारे नर,
जोन कीन्हों नेह रघुवीर जगदीश सों॥
शपन कचन जब पकरि लै जैहैं कोई,
राखि न सकहिं वरु प्यारे हूं ते प्यारी हो।
चाहे वीर भाई सुत चाहे नारी प्यारी,
क्यों न मातहूं पिता की बल बुद्धि जाय मारी हो
कायहूं सकाय भात कायर करोर वीर,
कारन गुजारें कछु ठाढ़े पास सारी हो॥
तहां हैं बचैय्या रघुरैय्या गजराज भनैं,
करि बजरंग सों हैं जाके अनुचारी हो॥
भार होत भार शुचि भार हूं जियत वेग,
भार को न दूर नेक जाके अवलोके रे।
जाहि के निदेश खग खग सु प्रकाशें जग,
खग न कबंध देत खग नित बहेरे॥
जग को करत रज रज को करत अग,
खग नर मुनी कोई पार नहिं पाते रे।
मानुष को जन्म लहि काह फल पायो शठ,
जो न गजराज ऐसे हरि रंग राते रे॥
गीध व्याध तारी प्रहलाद ध्रुव अम्बरीष,
द्रौपदी की टेर सुनि चीर को बढ़ाई है।
ग्राह सो बचायो गजराज गजराज भनैं,
भिल्ल नारि झूठे बेर मांग मांग खाई है॥
जानत जहान हाल गणिका सुदामा की,
अहिल्या की विचित्र गति शास्त्रन बताई है
ठोक के बजाय देख डर न तू ाहे मन,
ऐसे प्रभु राम ही के भजे से भलाई है।

दोहा

जग निशि दिनकर सुख सदन,
संसय करि मृगराज
भज मन सोइ रघुवंश मनि,

खर अरि दीन निवाज ॥

कुमारललिता छंद

विषय जग विनासी छटा घन घनासी ।
मदादिक तजोरे रमापति भजोरे ॥

घनाक्षरी

मानी है सकल जग मानी हैं पुरान वेद,
सानी ना दिखात कोई थानी हार मानी है।
ध्यानी है महेश ध्यान जानी न गनेश भेव,
कोटि फणवानी मति निपट हिरानी है॥
पानी पतियानी पूत पानी न करारी कुछ,
भनि गजराज ज्ञानी अक्कल सिरानी है।
ऐसे हरि रामचन्द्र ध्यावो तजि छिद्र छंद,
आनन्द के कंद सुख सपति के दानी हैं॥
ज्योतिन में अर्क ज्योति तारन में चंद्र कला,
देवन में इन्द्र जैसे वेदन में साम हैं।
पावक वसुन मध्य शैलन सुमेरु जिमि,
गौ वन में काम धेनु रूपन में काम हैं॥
भनि गजराज अस्त्र शास्त्रन में वज्र जिमि,
नागन अनंत जैसे जोगिन में वाम हैं।
पच्छिन में वैनतेय मीनन मगर जैसे,
तैसे जग तारन में राघवेश नाम है॥
नाम के प्रताप भये वाल्मीकि आदि कवि,
नाम के प्रताप गजराज ने कमाई है
नाम के प्रताप काल कूट शिव पान किये,
नाम के प्रताप ध्रुव ऊंच पंच पाई है॥
नाम के प्रताप खल कोटिन सुधारे गति,
नाम के प्रताप प्रहलाद ने दिखाई है।
भनि गजराज राम नाम के प्रताप अति,
चार पांच कोटि मुख ते न ओर पाई है॥
मोह वन दहन को अग्नि प्रचण्ड ज्योति,
संत कंज कानन को भानु रूप मानिये।
कौन न मतंग यूथ नासिवे को सिंह रूप,
भूतल विहंगन को बाज मन जानिये।
भनि गजराज दीन भक्तन को कल्पवृक्ष,
पाय एनि केतु को महेश सो बखानिये।
ईश हिय मानस को बाल राज हंस सम,
भर्ग सर्प ग्रासिवे को वैनतेय मानिये॥
कर्ण सों न दानी नहीं बानी सो बोलैय्या कोई,
ज्ञानी न भुशुन्डी सम योगी न महेश सों॥
सोम सों सुशील ना वकील बीर अंगद सों,
वलि सों गंभीर न कुटील दानवेश सों॥
पत्रिन करीन सों अदीन ना कुबेर सों,
नवीन सों न बाघ कहूं पूरे गुण शेष सों।
भनि गजराज पौन पूत सों न बन्दर,
न मदन्र सों शैल न प्रताप राघवेश सों॥

दोहा

राम नाम सुन्दर सुखद ताको आदि न अन्त।
शिव अज शारद शेष हूं संत न अन्त लहंत॥

चौपाई

राम नाम महिमा अघहारी।

तीनहुं लोक करत उजियारी ॥
तर्क तिमिर कहं अर्क प्रकाशा ।
खर क्षयाण छेदन भव पाशा ॥
राम नाम भक्तन अलि कंजा ।
प्रबल दहन भव अपथ निकुंजा ॥
कलि अघ छेदन ईश त्रिशूला ।
कुमति विदारन मुख तरु मूला ॥
राम नाम मुद मंगल दाता ।
दारिद दोष भवाम्बुद खाता ॥
ज्ञान प्रकाशक स्वर्ग निसेनी ।
कल्मख नाशन विमल त्रिवेनी ॥
नाम हरित दुःख दारिद दोषा ।
अघ दिन हृदय होत मन तोषा ॥
राम नाम महिमा अति भारी ।
बरणि सकत नहिं अहि कामारी ॥

दोहा

राम नाम अमृत सरस पान करहिं जो लोग ।
मिलत मोक्ष योगिन अलभ छूटत कलिमल रोग ॥

घनाक्षरी

कुंजर अनेक द्वार झूमत जंजीर चड़े,
चपल तुरंग पौन गोने चाल वारे हैं ।
सुन्दर सुनैनी गज गामिनी सुचन्द्र मुखी,
भीतर विराजैं रति रूप शत हारे हैं ॥
भनि गजराज देश देश के नृपाल खड़े,
रिद्धि सिद्धि हाथ जोरे चलत अगारे हैं ।
कैसे ये लखात बिना राम सों सनेह किये,
जैसे बिनु वस्त्र नारि सोरहों श्रंगारे हैं ॥
तोलौं मृगनैनी के कटीले बाण छेदैं उर,
तोलौं महा मोह लोभ फांसन फंसाई है ।
तबलौं ललात फिरैं टुक कूट रोटिन को ।
तबलौं अनेक कष्ट अंग अंग पाई है ॥
भनि गजराज तोलौं रोग सोग छायो तन
लालची लबार बार बार कहलाई है ।
तोलौं सब प्रिय परिवार हूं विशने भये,
जबलौं न दीनबंधु राम गुण गाई है ॥
राम की निकाई ना छिपाई कहूं काहू सों,
जु पंछी पशु पाय रहूं जाने प्रभुताई को ।
आमिष भखैय्या गृद्धराज को उबारे छिन,
वाहन बनाये दिये मान खगराई को ॥
नाग की पुकार सुनि धाये पांव पैदल ही,
पत्थर उबारे कहो और की चलाई को ।
भनि गजराज ऐसे राम रंग राते जो न,
जीवत मुये समान भार भूमि माई को ॥

चौपाया छंद

सुरराज समान संपति नाना,
धन कुबेर समपाई ।
मनसिज सम गाता कर्ण सो दाता,
शिव सम ध्यान लगाई ।
तब जोग जराये जटा बढ़ाये,
गणपति सों पुनवाई ।

सब वृथा लखावै काम न आवै,
बिना भजन रघुराई ॥

दोहा

कलि कुंजर मृगराज हरि,
मोह व्याल हरियान
दीन बन्धु रघुवीर को,
क्यों न भजो जियान ॥

सवैय्या

कलि काल कराल महा दुख जाल,
बेहाल फिरें सब लोग लुगाई ।
प्रतिसाल अकाल परे विकराल,
बिना जल नाज के लोग ललाई ॥
महिपाल जलाल दलाल भये,
हरिमाल प्रजान को कोष धराई ।
तहं औध नृपाल कृपाल हरि,
कलि साल पयाल को ज्वाल सों भाई ॥

गीतिका छंद

सत्य युग जनक सत तन धन,
तरहिं तपतें कठिनई ।
यज्ञ करि करि तरत त्रेता,
त्रसित नित मन बिकलई ॥
होम पूजा दान द्वापर तीन,
तन मन धन छई ।
नाम कलि अवलम्ब इक,
बिन दाम दुख अति सुख मई ॥

दोहा

कलि अधार केवल हरी,
रामचंद्र रघुवीर ।
भज मन नित अस जानि त्रिय,
कल्मष पावक नीर ॥

अपूर्ण

काव्य

[लेखक—बाबू नन्दकिशोरजी श्रीवास्तव एम० ए०, एल० एल० बी०]

काव्य ब्रह्म का आनंद और सौंदर्य स्वरूप है संसार में और सृष्टि में काव्य है, संगीत में काव्य है, और काव्य कवि की आत्मा है। कविता एक झलक है जिसमें परमब्रह्म सच्चिदानन्द ज्योति-स्वरूप परम महान् सौंदर्य का परिचय प्राप्त होता है। कवि हृदय एक निःसन्देह-पक्षी है। जिसकी फड़क विरह विरह वेदना है और जिसके पंख विरहाग्नि से झुलस चुके हैं। परन्तु जिसमें अब भी प्रिय मिलन की आशा आत्मविस्मरण अर्थात् बेहोशी के अन्तर्गत जीवन को घोटते हुए रख कर केवल एक रक्त-रंजित पाषाण खण्ड है बल्कि आत्मा और सच्चिदानन्द के बीच एक अमूल्य सौंदर्य माध्यम्य है।

सच्ची कविता किसी वास्तविक रसमयी तरंग द्वारा उद्वेलित हृदय का स्वछन्द कलायुक्त और तालमय अभिव्यंजन है। जब कि मनुष्य अपनी कल्पना के शिखर पर उच्चतम चैतन्य अवस्था में आत्मविस्मरण कर तल्लीन हुआ। तत्वदर्शी होकर तत्क्षण माध्यम्य रहित रीति से उस केवल सौंदर्य राशि का आनन्दमय निरीक्षण तथा उपभोग करता है जिससे उसके विचार और भाव दिव्य उच्छ्वास द्वारा विमल, रुचिकर, आदर्श मनमोहनी तथा निश्चित साकारता प्राप्त करते हैं। इटैलियन कवि दान्ते की प्रेमिका देवी Batrice ने मर कर जिस रसमयी तरंग का रूप धारण कर दान्ते के हृदय को उद्वेलित किया उसका किस साहित्य प्रेमी को पता नहीं।

कविता क्या है ?-कविता उसका नाम है जो राम चरित्र मानस में प्रस्तुत है। कविता वह है जो कालीदास जी के मेघदूत के नाम से विख्यात है। कविता जानना हो तो रसखान के पदों का आश्रय लो।

परन्तु फिर भी कविता क्या है ? यह एक रहस्य है, यह समस्या है और यह वैसी है जैसी कि मानव जीवन अथवा सौंदर्य की क्योंकि वास्तव में तो कविता हृदयाग्नि का प्रचण्ड प्रदाह है। जिसमें हर क्षण कवि अपनी आहुति झोंकता रहता है। या यूं कहिए कि क्षण २ अपने चसके के लिए आत्म-हत्या करता रहता है। कवि हृदय इस ब्रह्माण्ड से भी बड़ा है। एक सौंदर्य जगत् है, जिसमें सदैव प्रलय ही प्रलय मची रहती है। और जिसके लिये ईश्वर की तलाश ही तलाश रहती है, वह मिलता नहीं यदि मिल जाय तो तत्क्षण वह संसार नष्ट भ्रष्ट हो जाय। कविता उसी संसार का धुंआ है, और उस विश्वानल का क्षुद्र परिचय देता है, या उस महा प्रलय की चिंगारी है, जो इस संसार को भी अपनी अग्नि से उस प्रलय में घसीटना चाहती है।

यह संसार भी किसी के हृदय की कविता है। इसका कवि ईश्वर तुल्य है। जिस समय वह साक्षात्कार हो जाता है, उसकी सारी सुन्दरता उस महान् सौंदर्य राशी के सामने केवल माया जाल प्रतीत होने लगती है। इस संसार में जीवन एक

स्वप्न है। यह स्वप्न तभी टूटता है, जब इसके स्वामी का साक्षात्कार होता है। परन्तु इसका टूटना बहुत कठिन है। क्योंकि यह स्वप्न विश्व-सौंदर्य से भरा हुआ है। और अपनी तरह का एक अनूठा आनन्द रखता है जो कि शायद जाग्रत अवस्था में जो चाहें निःसन्देह इससे ऊंची हो और शायद इसका मज़ा कहीं बढ़ा चढ़ा हो, परन्तु जो इसके बराबर कदापि नहीं हैं, दुर्लभ है। यथा-

मज़ा बेहोशिये उल्फ़त का हुशियारों से मत पूछो।
अज़ीज़े ख़्वाब को लज़्ज़त को बेदारों से मत पूछो।

बस कविता का चमत्कार यही है कि इसमें एक क्षण में दोनों ही आनन्द मिल जाते हैं, एक ही श्वास में दोनों रस, एक ही अनुभूति में दोनों चसके, एक ही दृष्टि में दोनों झलक अलग २ और सब मिश्रित रूप से प्राप्त हो जाते हैं।

इसीलिए परिमित और एक पाक्षिक दृष्टि से साहित्यकारों ने कहीं तो काव्य को रसात्मक वाक्य बतलाया है, और कहीं जीवन की आलोचना बताया है, और कहीं यही कह कर ही रह गए हैं कि वह वही वाक्य है जिस से चित्त चमत्कृत हो उठे। अर्थात् सूर का "सर" पीर और पद ही काव्य-मय है।

"किंधौं सूर को सर लग्यो किंधौं सूर की पीर।
किंधौं सूर को पद लग्यो तन मन धुनत शरीर।"

चाहे उत्तम से उत्तम शब्द-मुक्ता, उत्तम से उत्तम ढंग से पिरोए हुए हों, उनमें प्रोफ़ैसर Elton के मतानुसार मैटाफ़िज़ीकल टच अर्थात अध्यात्मिक छाप नहीं है तो वह चाहे कितने भी कलायुक्त हों कभी काव्यमय नहीं हो सकते। सर्वथा काव्य ही नहीं रहेंगे। श्री तुलसीदास जी का मत है।

मनि मानिक मुक्ता छवि जैसी।
अहि गिरि गज सिर सोह न तैसी॥
नृप किरीट तरुनी तनुपाई।
लहहिं सकल सोभा अधिकाई॥
तैसेहि सुकवि कवित बुध कहहीं।
उपजहिं अनत अनत छवि लहहीं॥
भगति हेतु विधि भवन बिहाई।
सुमिरत सारद आवत धाई॥
रामचरित सर बिनु अन्हवाए।
सो श्रम जाहि न कोटि उपाए॥
कवि कोविद अस हृदय बिचारी।
गावहिं हरि यश कलिमल हारी॥
कीन्हे प्राकृत जन गुन गाना।
सिर धुनि गिरा लागि पछताना॥
हृदय सिन्धु मति सीप समाना।
स्वाती सारद कहहिं सुजाना॥
जौ बरषै बरबारि बिचारू।
होहिं कवित मनि मुक्ता चारू॥

कवि बन्धन रहित है जैसे कि किसी ने कहा है। "निरंकुशहि कविया"। और उसकी भाषा यातो उसके अपने ही विश्व की भाषा है जैसे कवि शैले की, अथवा कवि स्पैन्सर की, अथवा उपनिषदों की, या उसकी भाषा प्रकृति ही की भाषा है। क्यों की कवि प्रकृति और उसके परमात्मा के निकट सदा रहता है। कवि की भाषा उस मनुष्य के हृदय की भाषा है, जो समाज के बन्धनों से मुक्त

है। और जिस पर बराबर तथा शिष्टाचार की झलक नहीं पड़ने पाती। जो भोला है, निष्पाप है, और जो प्रेम मूर्ति है उस ही की भाषा में रस और काव्य स्वभाविक होते हैं। पशु पक्षी झरने, नदियां पवन वर्षा, बिजली, बादल इन की भाषा में ही कवि का शब्द भण्डार होता है।

विदुरानी की वह भाषा कि जिस के द्वारा पथिक श्री कृष्ण भगवान केले के छिलकों के खाने में "ना" करने का साहस न कर सके वास्तव में कवि की भाषा है अर्थात् मौन, संकेत, संगीत प्रेम। कवि भाष व्याख्यानिक नहीं है, उपदेशकों की नहीं है बल्कि सरिता के कल २ नाद और पौण्डरिक के रस रूप और गंध से बनी हुई है।

फिर

ले०—श्री मदनगोपाल सिंहल, सम्पादक 'आदेश मेरठ'

कालिन्दी के कूल मधुर धुनि वेणु बजाना। गोपाल बनकर वन वन में धेनु चराना॥
दूध दही मक्खन का खाना और लुटाना। भक्तन को प्रमुदित करना कर कौतुक नाना॥

फिर से दिखलाओ हरे! नन्दलाल के वेश में।
बहे प्रेम का स्रोत फिर जिससे प्यारे देश में॥

जहां कभी गोपाल! दूध की नदी बहाई। बहा रहे हैं वहीं गाय का रक्त कसाई॥
हुआ नष्ट गो वंश वही अब गोकुल राई। जिस पर 'गोपाल' गोप की पदवी पाई॥

वह लज्जा लो आओ हरे चक्रपाणि के वेश में।
करने धर्म स्थापना फिर से भारत देश में॥

मेस्मरेजिम

गतांक से आगे ।

[ले० श्री यमुना प्रसाद जी श्री वास्तव]

'तुम्हें आगे गिरने की इच्छा हो रही है-, 'तुम आगे की ओर गिर रहे हो" ! 'गिरे' ! 'गिरे !' और एक, दो कह कर तीन के साथ हाथ खींचलो और जब पात्र गिरने लगे तब उसे सम्हाल लो ।

इसी प्रकार पात्र के पीछे खड़े होकर उसका मस्तक अपने दाहिने हाथ की हथेली पर और बायां हाथ उसके कपाल पर रख कर कहो कि सब विचारों को दूर करके पीछे की ओर गिरने का विचार करे और अपनी दृष्टि पात्र की त्रिकुटी में जमा कर आदेश दो । "तुम को पीछे गिरने की इच्छा हो रही है,, । तुम पीछे की ओर गिर रहे हो इत्यादि और एक, दो, तीन कह कर धीरे २ अपने हाथ खींचलो और जब पात्र गिरने लगे तब उसे सम्हाल लो ।

पात्र को सामने बैठा कर कहो कि अपने एक हाथ की उंगलियों को दूसरे हाथ की उंगलियों में खूब फंसा लेवे और उनके चिपक जाने का विचार करे । इसके पश्चात् उसकी फंसी हुई उंगलियों को अपने एक हाथ में लेकर धीरे २ दबाओ और दूसरे हाथ से उन पर पास करते जाओ साथ ही पात्र की त्रिकुटी में दृष्टि जमा कर सूचनात्मक आदेश भी देते जाओ ।

'तुम्हारी उंगलियां फंस गई हैं' 'वे अलग नहीं हो सकतीं' इत्यादि ।

एक मिनिट इसी दशा में रख कर और इसके बाद जांच करके ताली बजा दो और फूंक मार कर तथा कुछ उलटे पास देकर कह दो कि अब अलग कर लो । उंगलियां अलग हो जांयगी ।

हिपनाटिक निद्राएँ पांच हैं । निद्रा, तिन्द्रा, सुषुप्ति, अनुवृत्ति और दिव्य दृष्टि । इनके उत्पन्न करने की रीति यह है ।

पात्र को सामने बैठा कर स्वयं दक्षिण की ओर मुख करके बैठ जाओ और पात्र के हाथ में एक रुपया देकर कह दो कि सम्राट के चित्र की ओर देखता रहे और निद्रा आने का विचार करे और स्वयं गिन्ती गिनना आरम्भ कर दो और पात्र को सूचना दो कि 'एक' पर नेत्र बंद कर लेवे और 'दो' पर खोल देवे । इसी प्रकार प्रत्येक अंक पर बंद करना और खोलता रहे । 'बीस' पर पहुंचते ही पात्र के नेत्र मुंद जांयेंगे । उस समय उसे सोने की आज्ञा दे दो और एक मिनिट तक इस दशा में रख कर उसकी त्रिकुटी में फूंक मार कर

सावधान कर दो और कह दो कि अब अपनी आंखें खोल दो।

रोगी को सामने बैठा कर और उसके नेत्रों पर दृष्टि डाल कर उससे कहो कि अपनी आंखें मूंद लेवे और जब तक खोलने को न कहा जाय तब तक बंद किये रहे। अनन्तर उसके रोग दूर करने की कामना करके उसकी त्रिकुटी में दृष्टि जमा दो और उसे सूचना दो कि पीड़ास्थल पर चार अंगुल ऊपर से चार अंगुल नीचे तक हाथ फेरता रहे और रोग दूर हो जाने की कामना करता जावे। इस प्रकार रोगी को काम में लगा कर स्वयं मंत्र उच्चारण करते जाओ। मंत्र ये है–

'तुम्हा रोग दूर हो रहा है' 'तुम अच्छे हो गये हो'। 'तुम्हारी पीड़ा दूर हो गई है'। अच्छा एक! दो! तीन! और पीड़ास्थल पर फूंक मार कर तथा ताली बजा कर कह दो, 'अब तो अच्छे हो गये'। इसके पश्चात् एक मिनिट का समय देकर क्या हाल है? यदि कहे कि अच्छा हो गया हूं तब तो उसे विदा करदो। यदि कहे कि कुछ कसर है तो उपरोक्त क्रिया को पुनः दुहरा दो अब की बार अवश्य अच्छा हो जायगा और हंसता हुआ घर चला जायगा।

रोगी की आंखें मुंदवा कर तथा उसकी त्रिकुटी में दृष्टि जमा कर कामना करो कि उसकी दृष्टि दिव्य हो जावे और वह प्रश्नों का सही उत्तर दे सके। इसके पश्चात दो, तीन, मिनिट का समय देकर उससे कहो 'अब तो तुम्हें प्रकाश दिखाई दे रहा है'। यदि रोगी कहे नहीं तब पुनः जोर देकर कहो अब तो अवश्य दिखाई देने लगा है। देखो! सामने डाक्टर साहिब बैठे हुए हैं। उनसे कहो कि नाड़ी देख कर तथा नुस्खा तजवीज़ें और जो दवा वे बतलावें उसे हमको लिखाते जावें और जब लिख चुको तब रोगी से कहो कि डाक्टर साहिब से इसी समय दवा मांगो और जब वह डाक्टर साहिब की दी हुई दवा पी चुके तब उससे दरयाफ्त करो, यदि रोगी कहे कि कुछ कसर है तो उसे आदेश दो कि डाक्टर साहिब से फिर दवा मांगो अब की बार रोगी अवश्य चंगा हो जायगा और हंसता हुआ घर की राह लेगा।

इसी प्रकार, यदि इच्छा हो, तो पात्र को श्रीराधाकृष्ण, श्रीरामचन्द्रजी, श्रीजानकी जी आदि देवी देवताओं के दर्शन करा दो। हलवाई की दुकान बता कर नाना प्रकार की मिठाईयां खिला दो। फुलवारी दिखाकर पुष्पों की बहार दिखा दो और माली बुलाकर नाना प्रकार के फूलों से सत्कार करा दो। पात्र का मुंह मुंदवा कर खोलने तथा बोलने की शक्ति का ह्रास करदो। खड़ा करके बैठने की और बैठा कर खड़े होने की शक्ति हरलो मतलब यह है कि मेस्मरिस्ट जो कुछ आदेश देगा पात्र उसका पालन करेगा परन्तु ऐसे खेल तमाशे केवल अभ्यास बढ़ाने के लिए करना चाहिये। और अभ्यास पूर्ण हो जाने के पश्चात् अपनी सारी शक्ति को परोपकार में लगा देना चाहिये।

'पर हित बस जिनके मन मांही।
तिन कहुं जग दुर्लभ कछु नाहीं॥'

और भी :–

'नेकी का लुत्फ यह है, इन्सान करके भूले।
अहसान का मज़ा है, अहसान करके भूले॥'

भक्ति के प्रिय पाठको! 'ओम' हिप्नाटिज़िम की कुंजी ही नहीं वरन् महा मंत्र है। उसके सम्बंध में महात्मा तुलसीदास ने कहा है।

'मंत्र महामनि विषय व्याल के।

मेटत कठिन कुअंक भाल के ॥'

'ओम्' भगवान का नाम है ।-

'है नाम ईश्वर का, यही सब को प्यारा है ।
ऋषी मुनियों के जीवन का यही केवल सहारा है ॥'

'ओम्' ही ब्रह्म है, ओम् ही परब्रह्म है । 'ओम्' का जप करने से मनुष्य जो २ इच्छा करता है । सब पूर्ण होती है ।-

'ओमित्येकाक्षरं ब्रह्म, ओमित्येकाक्षरं परम् ।
ओमित्येकाक्षरं ज्ञात्वा, योयद्इच्छति तस्य तत् ॥'

निरन्तर 'ओम्' का जप कीजिये ।-

'बैठ लेटे चालते, खान पान व्यौहार ।
जहां तहाँरे, सुमिरन करहजो ! हिये निहार ॥'

और 'ओम्' की आराधना में अपने शरीर को समर्पण कर दीजिये । इसी में हमारा आपका कल्याण है । बस ! अब बोलिये :—

भगवान श्रीकृष्णचन्द्र आनन्दकन्द वृन्दावन बिहारी की जय ! जय !! जय ! !!!

उपदेशामृत

[ले० श्रीस्वामी भोले बाबा जी]

१—जो पुरुष शास्त्र सुन, पढ़ कर भी निषिद्ध कर्मों से दूर रहने की इच्छा नहीं करता, उसके लिए संसार बन्धन से मुक्त होने का कोई उपाय नहीं है ।

२—पृथिवी पर जितने मनुष्य हैं, उतने ही धर्म मार्ग हैं, प्रत्येक धर्म मार्ग ईश्वर से ही प्रवर्त हुआ है, मनुष्य से नहीं ।

३—मुमुक्षुओं और श्रेय साधकों को सर्वदा अपने दोष दूर करने का प्रयत्न करना चाहिये और ईश्वर के उपकार और ईश्वर की महत्ता को कभी भी भूलना न चाहिये ।

४—तत्त्वज्ञान तो जब प्राप्त होगा तब होगा ! जब तक तत्त्वज्ञान प्राप्त न हो तब तक जितने प्रमाण में सच्ची जिज्ञासा और साधुता और होगी उतने ही प्रमाण में मनुष्य ज्ञान के यथार्थ रीति से समझ सकता है और उसको आचरण में भी ला सकता है ।

५—साधक की प्रत्येक कृति और स्थिति ईश्वर प्राप्ति के लिये होनी चाहिये जो कृति अथवा स्थिति इस उद्देश से रहित है, वृथा है ।

६—जो पुरुष प्रयोजन मात्र ही बोलता है, अप्रयोजन नहीं बोलता, वह पुरुष बुद्धिमान है ।

७—सच्चे संत साधुओं के सिवाय दूसरों का सह वास न करने वाला ही सच्चा श्रेयसाधक है है।

८—संसार और संसारियों से दूर रहने में ही साधक का श्रेय है जो साधक ऐसा करेगा, उसमें ही सच्चे जीवन का संचार होना संभव है।

९—लौकिक जीवन से छूट जाना ही साधन का मुख्य द्वार है क्योंकि साधक और ईश्वर के बीच में लौकिक जीवन ही भारी अंतराय—प्रतिबंध है जब तक इस अन्तराय का नाश न होगा तब तक भगवत् के मार्ग में प्रकाश नहीं मिलेगा। प्रकाश बिना अंधेरे में जाना कठिन है।

१०—जब तक ईश्वर की प्राप्ति न हो तब तक समस्त जगत को शत्रु समझ कर दूर रहना उचित है। जब ईश्वर की प्राप्ति हो जाती है तब तो समस्त जगत ईश्वर रूप ही भासता है, इसलिये जब तक ईश्वर प्राप्ति न हो, तब तक एकान्त में वास करके दीर्घ काल तक, आदर सत्कार पूर्वक निरंतर ईश्वर का भजन और चिन्तवन करना चाहिये। ऐसा भगवद्भक्त और महात्माओं का मत है।

चर्पट पंजरिकोस

भाषा

[ले० पं० शिवाराम शर्मा वैद्य स्टेट बुंदी नदन]

क्यों न भजता है अरे मति, मंद तू गोविन्द को ।
रात दिन गोविन्द भज गोविन्द तू गोविन्द को ॥
आगई है मृत्यु तेरी निकट तू क्यों डर रहा ।
रक्षा न कर सकता तुझे जो धातु दुकृञ पढ़ रहा ॥
दिन गया फिर रात आया फिर फजर फिर शाम है ।
शिशिर आया फिर बसंतादिक ऋतु का काम है ॥
जाड़ा अधिक दिन अग्नि तपते पृष्ट तपते भानु है ।
रात तरु तल वास करते सिकुड़ कर भुज जानु है ॥
मांगते भिक्षा दरो दर मौत खेल खिला रहा ।
आयु पूरण हो रहा तौ भी न आसा तज रहा ॥
जब तलक धन को कमाने के लिये सामर्थ है ।
जब तलक

तब तलक स्त्री सुता सुत मानते निज अर्थ है ॥
तन पुराना हो गया वय वृद्ध फिर भी आगये है ।
पूछने वाला नहीं घर के वे गाना हो गये है ॥
इक जटा धारी बन गया इक केश मुंडित कर लिया ।
इक वस्त्र भगवां पहिन कर बहु रूपिया सूरत लिया ॥
देख कर भी देखते नहिं धूल आंखें पड़ रही ।
निज पेट भरने के लिये बहु भेष आडम्बर गही ॥
पढ़ लिया जिसने तनक भी कृष्ण गीता ज्ञान को ।
पी लिया एक बूंद गंगा जल सदा कल्याण को ॥
कर लिया एकबार जो गोविन्द पूजा प्रेम से ।
तिनके न यम चर्च्चा करें भगवान भजिये नेम से ॥
तन चाम झुर्रस पड़ गया शिर अधिक कपने लगा ।
सब दंत मुख से झड़ पड़ा बस नाक ही दीखने लगा ॥
बुड्ढा हुये पर घूमते हैं हाथ लाठी टेकते ।
यह हाल उनका हो रहा तो भी न आसा छोड़ते ॥
वय बाल में बहु खेल कूदे ज्वान तरुणी में फंसे ।
वृद्ध में चिन्ता ग्रसित है ब्रह्म में मन ना गंसे ॥
बहु बार होता जन्म है बहु बार मरते सदा ।
बहु बार माता के उदर में शयन करते नर्कदा ॥
संसार सागर यह भरा है पार होना अति कठिन ।
रक्षा तुम्हारी हाथ है वासी सदा वृन्दा विपिन ॥
घड़ी से घंटा पहर दिन रात में फिर मास है ।
मांस से बहु वर्ष गत पर आस से न निरास है ॥
ढल गया है अब जवानी विषय है किस काम की ।
जैसे तलैयां सूख जल से हीन है वे काम की ॥

गांठ में पैसे नहीं परिवार को फिर क्या करें ।
ब्रह्म को जाना नहीं संसार को फिर ना डरें ॥
नारियों के जंघ कुच दृग देखी माया में फंसें ।
यह मांस पिन्डी मेद हड्डी मन विचार ये ना घुसें ॥
मैं कौन हूं आया कहां से मातु पितु मेरा कहां ।
यह व्यर्थ है संसार सो चिय स्वप्न जानिय सब यहां ॥
गीत गाना नित्य गीता और नाम सहस्त्र से ।
ध्यान धरिये रमा पति का भक्ति युत विश्वस्त्र से ॥
संग करिये सज्जनों का ज्ञान उनसे लीजिये ।
देना अगर कुछ है तुम्हें तो दीन ही को दीजिये ॥
प्राण जब तक देह में है प्यार स्त्री नित करें ।
चल बसा है प्राण जब तब देह से सब ही डरें ॥
सुख किया बहु नारि के संग रोग पीछे ग्रस लिया ।
मृत्यु मुख में नित पड़ा पर पाप त्यागन ना किया ॥
हर गली की चिंदियों का गूदड़ी तन ढक रहा ।
पुण्य पापा चरण से मार्ग विवर्जित नित रहा ॥
मैं न हूं सच तुम सच संसार भी यह सच न है ।
सच नहीं कुछ भी अगर फिर सोचना भी सच न है ॥
गया गंगा सिन्धु संगम व्रत किया बहु दान भी ।
ज्ञान इसमें है न तो मूर्ख वही नादान भी ॥
बन गये ज्ञानी बड़े पर हृदय कज्जल रेख है ।
मुक्ति होना अति कठिन शत जन्म लो यह लेख है ॥
मत करो जवानी तथा धन में कभी अभिमान तुम ।
यह एक क्षण में नाश होगा मूढ क्यों होते हो तुम ॥
घूमता है चक्र नित शिर पर तुम्हारा काल का ।
दे रहा धोखा तुम्हें यह विश्व माया जाल का ॥
मुक्तिदा भज नित्य पद रज सिया राम रमेश को ।
रात दिन गोविन्द भज गोविन्द न गोविन्द को ॥

सत्संग सभा

(प्रथम भक्ति संतन कर संगा)

[संग्रहकर्ता—रामेश्वरदत्त शर्मा भारद्वाज]

१—जिनके हृदय में मंगलमय भगवान निवास करते हैं, उन्हें सर्वत्र लाभ है और सब जगह उनकी जय है, उनका पराजय कहीं नहीं होता ।

२—भगवान में परम प्रेम होना ही भक्ति है । भक्ति कर्म ज्ञान और योग से भी अधिक श्रेष्ठ है । इस कलि काल में भक्ति परम पद तक पहुंचने का सरल और साध्य उपाय है ।

३—हरि कीर्त्तन करने में उम्र की परवाह करना मूर्खता है ।

४—जिसका चिंतन किया जायगा उसके गुण हमारे में आवेंगे । अतः भगवन् और उनके भक्तों का ही चिंतन करना चाहिये, जिससे उनके गुण हमारे में प्रकट हो ।

५—भक्ति अपने सुख के लिये करनी चाहिये, दुनिया को दिखलाने के लिये नहीं ।

६—भगवद्भक्तों को श्री भगवान् के गुणों से सम्बन्धन रखने वाली वार्त्ता या पठन पाठन में एक क्षण मात्र भी समय नहीं खोना चाहिये ।

७—भगवान् की सत्य स्वरूपता और भगवद्भक्तों की सत्य प्रियता में सन्देह करना पाप है ।

८—सदा अपने हृदय को देखते रहो कि कहीं उसमें काम, क्रोध, वैर, ईर्षा, मद, मोह, घृणा और मान रूपी शत्रु घर न करलें ।

९—जो लोग केवल उदर पोषण में ही समय को बिता देते हैं और भगवन्नामोच्चारण में गफलत करते हैं, उन्हें तो बिना सींग पूंछ का पशु समझना चाहिए ।

१०—भक्त वही है जिसका अन्तःकरण समस्त पापों से रहित होकर केवल अपने इष्टदेव परमात्मा का नित्य निकेतन बन जाय ।

विचार-सागर

[ले० श्रीयुत ....]

प्रथम तरंग

अनुबन्ध पर साधारण विवेचन ।

दोहा—जो सुख नित्य प्रकाश विभु, नामरूप आधार ।
मति न लखै जिहि मति लखै, सो मैं शुद्ध अपार ॥१
१अवधि अपार स्वरूप मम, लहरी विष्णु महेश ।
२ विधि रवि चंदा वरुण यम, शक्ति रे धनेश गनेश ॥२
जो कृपालु सर्वज्ञ को, हियधारत मुनि ध्यान ।
ताको होत उपाधितें, मो मैं मिथ्या भान ॥३
है जिहि जाने बिन जगत, मनहु ४ जेवरी सांप ।
नसे भुजग जगजिहि लहै, सोऽहं आपै आप ॥४
बोधचाहि जाको सुकृति, भजत राम निष्काम ।
सो मेरो है आतमा, काको करौं प्रणाम ॥५
भरयो वेद-६सिद्धान्त-जल, जामें अति गम्भीर ६ ।
अस विचार-सागर कहौं, ७ पेखि मुदित हैं धीर ॥६
सूत्र भाष्य वार्तिक प्रभृति, ग्रन्थ बहुत सुरवानि-८ ।
तदपि मैं भाषा करौं, लखि मति मंद अजानि ॥७

अर्थात्—यद्यपि संस्कृत भाषा में सूत्र, भाष्य वार्तिक रूप में अनेक पुस्तकें हैं तथापि उनसे सर्वसाधारण को कुछ भी लाभ नहीं पहुंच सकता परन्तु भाषा ग्रन्थों से प्रत्येक मनुष्य भली प्रकार लाभ उठा सकता है। यह भाषा का ग्रन्थ बहुत कुछ मार्ग दर्शक का काम देगा।

दोहा—कविजन कृत भाषा बहुत, ग्रन्थ जगत विख्यात ।
बिन विचार सागर लखे, नहि सन्देह निशात ॥८

अर्थात्—भाषा में भी बहुत से ग्रन्थ हैं किन्तु बिना "विचार सागर" के आत्म-वस्तु विषयक ज्ञान अन्य ग्रन्थों से नहीं होता। कारण यह है कि लोगों ने केवल सुन कर ही ग्रन्थ रच डाले हैं ऐसे ग्रन्थों में पंच भाषा नामक ग्रन्थ का नाम लिया जा सकता है। वैसे तो उनमें कई बातें शास्त्रसम्मत हैं, परन्तु सुनने पर जो सहज ही समझ में न आ सका वह विषय शास्त्र विरुद्ध हो गया है। इस लिये केवल सुन सुना करही जो ग्रन्थ लिखे जाते हैं। उनसे संशय-रहित ज्ञान नहीं हो सकता। कुछ लोग थोड़ा बहुत पढ़ कर ही भाषा ग्रन्थ रच डालते हैं जैसे 'आत्म-बोध'। वैसे ग्रन्थों द्वारा भी सन्देह ज्ञान की प्राप्ति नहीं हो सकती। कारण कि उनमें वेदान्त की संपूर्ण प्रक्रिया नहीं होती। परन्तु

इस पुस्तक में संपूर्ण प्रक्रियाएं हैं और यह वेदान्त शास्त्र के सर्वथा अनुकूल है। आत्मज्ञान की प्राप्ति में जो २ पदार्थ उपयोगी हैं उनका विवेचन इस में भली प्रकार विस्तारपूर्वक किया गया है। इस लिये भाषा के अन्य ग्रन्थों की भांति यह ग्रन्थ निरुपयोगी सिद्ध नहीं होगा ऐसा पूर्ण विश्वास है।

चौपाई—जहि अनुबन्ध विहीन जो ग्रंथ।
हैं न प्रवृत्त मुमुक्षु नर तौ लौं ॥
जानि जिन्हें यह सुनै प्रबन्धा।
कहूं तुरतहिं मैं अनुबन्धा ॥९॥

अर्थात्—सब से पहले यहां, 'अनुबन्ध' के सम्बन्ध विचार करने की आवश्यकता है। वेदान्त शास्त्र में अधिकारी, सम्बन्ध विषय और प्रयोजन को अनुबन्ध, कहा है! अनुबन्ध को जाने बिना जिज्ञासु मनुष्य की ग्रन्थ में अभिरुचि होना कठिन होता है अतएव, सब से पहले अनुबन्ध के मुख्य चार भेदों पर विचार होना आवश्यक है।

सो॰—"अधिकारी सम्बन्ध, विषय प्रयोजन मैं लिखब।
कहत सुकवि अनुबन्ध, तिन में अधिकारी सुनहु ॥१०

दो॰—मल विक्षेप जाके नहीं, किन्तु एक अज्ञान।
है चव साधन सहित नर, सो अधिकृत मति मान ॥११

अर्थात्—प्रत्येक मनुष्य के अन्तःकरण में मल विक्षेप और आवरण नामक तीन दोष होते हैं। निष्काम कर्म से मल उपासना से विक्षेप और ज्ञान से आवरण दूर हो सकता है। जिस मनुष्य ने निष्काम कर्म और उपासना द्वारा मल और विक्षेप को अपने अन्तःकरण से दूर कर दिया है और जिस के चित्त पर अज्ञान का आवरण

होता है तथा जो निम्न लिखित चार साधनों से युक्त होता है वही एक मात्र अधिकारी है।

चार साधनों के नाम ये हैं—

दोहा—प्रथम विवेक विराग पुनि, शमादिषट सम्पत्ति।
कही चतुर्थ मुमुक्षुता, ये चवे साधन सत्ति ॥१२

अर्थात्—विवेक, विराग, शमादि छः सम्पत्ति और मुमुक्षुता ये चार साधन हैं अब इन चारों के सम्बन्ध में अलग २ विवेचन किया जाता है।

विवेक के लक्षण

दो॰—अविनाशी आतम अचल, जगताते प्रतिकूल।
ऐसो ज्ञान विवेक है, सब साधन को मूल ॥१३

आत्मा नाश रहित और क्रिया रहित है और यह जगत आत्मा के विपरीत स्वभाव वाला विनाशी और चल है-ऐसे ज्ञान को विवेक कहते हैं। विवेक ही सब साधनों का मूल है। क्योंकि विवेक के बिना विराग आदि की प्राप्ति नहीं हो सकती इसलिये चारों साधनों का हेतु विवेक ही है।

विराग लक्षण

दो॰—ब्रह्मलोक लौं भोग जो, चहैं सबन को त्याग।
वेदअर्थ-ज्ञाता मुनी, कहत ताहि वैराग ॥

अर्थात्—देव दुर्लभ ऐश्वर्य और उपभोगों को भी जो ठुकरा देना चाहे—उसी को विराग कहा है।

शमादि छः सम्पत्तियों के नाम हैं।

दो॰—शमदम श्रद्धा तीसरी, समाधान उपराम।
छठी तितिक्षा जानिये, भिन्न भिन्न ये नाम ॥

अर्थात्—शम, दम, श्रद्धा, समाधान, उपराम और तितीक्षा ये छः सम्पत्तियां हैं। अब इनके लक्षण देखिये।

दो॰—मन विषयन तें रोकबो, शम तिहि कहत सुधीर।
इंद्रिय गन को रोकबो, दम भाषत बुधवीर ॥

सम्पूर्ण

मेरी भावना

(राष्ट्रीय नित्य पाठ)

जिसने राग-द्वेष कामादिक जीते, सब जग जान लिया ।
सब जीवों को मोक्ष मार्ग का, निस्पृह हो उपदेश दिया ॥
बुद्ध, वीर, जिन, हरि हर ब्रह्मा, उसको स्वाधीन कहो ।
भक्ति-भाव से प्रेरित हो यह, चित्त उसी में लीन रहो ॥

(२)

विषयों की आशा नहीं जिनके, साम्य—भाव धन रखते हैं ।
निज-पर के हित साधन में जो, निशि दिन तत्पर रहते हैं ॥
स्वार्थ त्याग की कठिन तपस्या, बिना खेद जो करते हैं ।
ऐसे ज्ञानी साधु जगत के, दुःख समूह को हरते हैं ॥

(३)

रहे सदा सत्संग उन्हीं का, ध्यान उन्हीं का नित्य रहे ।
उन ही जैसी चर्या में यह, चित्त सदा अनुरक्त रहे ॥

(४)

नहीं सताऊं किसी जीव को, झूठ कभी नहीं कहा करूं ।
परधन-वनिता पर न लुभाऊं, संतोषामृत पिया करूं ॥
अहंकार का भाव न रक्खूं, नहीं किसी पर क्रोध करूं ।
देख दूसरों की बढ़ती को, कभी न ईर्षा-भाव धरूं ॥
रहे भावना ऐसी मेरी, सरल-सत्य व्यवहार करूं ।
बने यहां तक इस जीवन में, औरों का उपकार करूं ॥

(५)

मैत्रीभाव जगत में मेरा, सब जीवों से नित्य रहे ।
दीन-दुखी जीवों पर मेरे, उर से करुणा-स्रोत बहे ॥

दुर्जन-क्रूर कुमार्गरतों पर, क्षोभ नहीं मुझ को आवे ।
साम्यभाव रक्खूं मैं उन पर, ऐसी परिणति होजावे ॥

(६)

गुणीजनों को देख हृदय में, मेरी प्रेम उमड़ आवे ।
बने जहां तक उनकी सेवा, करके यह मन सुख पावे ॥
होऊं नहीं कृतघ्न कभी मैं, द्रोह न मेरे उर आवे ।
गुण-ग्रहण का भाव रहे नित, दृष्टि न दोषों पर जावे ॥

(७)

कोई बुरा कहो या अच्छा, लक्ष्मी आवे या जावे ।
लाखों वर्षों तक जीऊं या, मृत्यु आज ही आजावे ॥
अथवा कोई कैसा ही भय, या लालच देने आवे ।
तो भी न्याय मार्ग से मेरा, कभी न पद डिगने पावे ॥

(८)

होकर सुख में मग्न न फूले, दुख में कभी न घबरावे ।
पर्वत नदी श्मशान-भयानक, अटवी से नहिं भय खावे ॥
रहे अडोल-अकंप निरन्तर, यह मन दृढ़ तर बन जावे ।
इष्ट वियोग अनिष्टयोग में, सहन शीलता दिखलावे ॥

(९)

सुखी रहें सब जीव जगत के, कोई कभी न घबरावे ।
वैर-पाप अभिमान छोड़ जग, नित्य नए मंगल गावे ॥
घर घर चर्चा रहे धर्म की, दुष्कृत दुष्कर हो जावे ।
ज्ञान-चरित उन्नत का अपना, मनुज-जन्म-फल सब पावे ॥

(१०)

फैले प्रेम परस्पर जग में, मोह दूर पर रहा करे ।
अप्रिय कटुक शब्द नहिं, कोई मुख से कहा करे ॥

REGD NO. L 3??

उत्तर भारत में पवित्र भावों की एक मात्र प्रचारिका

मासिक पत्रिका

भक्ति

श्रीभगवद्भक्ति आश्रम रामपुरा (रेवाड़ी) से भक्ति नाम की मासिक पत्रिका १० वर्षों से प्रकाशित हो रही है जनता में धार्मिक भावों की जागृति, समाज सुधार और शिक्षा प्रचार इसका मुख्य उद्देश है। आप अपनी सन्तान को सुसंस्कृत, सुशिक्षित और सुशील बनाने के लिये, अपनी गृहिणी को पतिव्रत धर्म सिखाने और आदर्श आर्य रमणी बनाने के लिये एवं अपने आपको भगवद्भक्त और महान बनाने के लिये भक्ति अवश्य मंगाइये। हजार जगह से बचत करके २) भेजकर साल भर तक ग्राहक बन जाइये।

दुहरा लाभ

भक्ति एक पारमार्थिक पत्रिका है धन कमाना इसका उद्देश नहीं है, यह सदा अपने ग्राहकों की भलाई और लाभ का ध्यान रखती है। आपको २) में भक्ति तो साल भर तक मिलती ही रहेगी परन्तु एक लाभ यह होगा कि भक्ति के पुराने विशेषांकों में से कोई सा एक विशेषांक अपनी इच्छानुसार उपहार में मिलेगा विश्वास कीजिये कि भक्ति के पाठ मात्र से आप एक अलौकिक आनन्द और स्वर्गीय सुख का अनुभव करेंगे। इसके पवित्र भावों की धुरन्धर विद्वानों ने प्रशंसा की है।

मैनेजर "भक्ति"

श्रीभगवद्भक्ति आश्रम रामपुरा (रेवाड़ी)

जिला (गुड़गावां)

मुद्रक तथा प्रकाशक भूमानन्द ब्रह्मचारी "भक्ति प्रेस" भगवद्भक्ति आश्रम, रेवाड़ी।